श्रीमद्भगवद्गीता एवं इमानुएल कांट के नैतिक विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

कुमारी पूजा
नेट/जे०आर०एफ० (दर्शनशास्त्र)
राँची विश्वविद्यालय, राँची

सारांश

नैतिकता का संबंध हमेशा विवेकयुक्त मनुष्यों के ऐच्छिक कर्मो से होता है। नैतिक जीवन वह जीवन है जिसमें नैतिक आर्दशों के आधार पर सद्गुणों, शुभ कर्मो के आचरण को करते हुए मनुष्य जीवन व्यतीत करता है। उल्लेखनीय है कि, हिन्दू नीतिशास्त्र हो या पाश्चात्य नीतिशास्त्र दोनों में ही ''मानवता का कल्याण'' को सर्वोपरि स्वीकार किया गया है। सर्वविदित है कि जर्मन और भारत की दार्शनिक परम्पराओं में महत्वपूर्ण सादृश्य जिसके संकेत जर्मन दार्शनिक इमानुएल कांट के पूर्व जर्मन साहित्य में सुलभ है परन्तु कांट का जो नीति दर्शन है वह इन दोनों को और भी निकट ला देता है।

जिस प्रकार भारतीय दर्शन में श्रीमद्भगवद्गीता को दर्शन एवं धार्मिक साहित्य का आधार स्तम्भ माना गया है उसी प्राकर पाश्चात्य दार्शनिक साहित्य में कोट के विचारों का भी महत्वपूर्ण स्थान रहा है। जिस प्रकार कोट नैतिकता का मूल आधार कर्तव्य -चेतना को मानता है। उसी प्रकार लगभग इसी सिद्धांत का प्रतिपादन गीता में भी हुआ था। जहाँ गीता में निष्काम कर्म को मानवीय जीवन का आदर्श बतलाया गया है, वही गीता के तुल्य हीं कांट के द्वारा भी ''कर्तव्य, कर्तव्य के लिए'' का निर्देश दिया गया है। वर्तमान परिदृश्य में भौतिकवाद के चक्कर में में फँसा मानव स्वयं के लिए अधिकार तो चाहता है परन्तु कर्तव्य निर्वहन से भागता हैं। ऐसे में गीता काा नैतिक विचार 'निष्काम - कर्मयोग' कांट का नैतिक विचार 'कर्तव्य, कर्तव्य के लिए' मानवीय समाज की ऐसी आधारशीला है जो वर्तमान के भोगवादी व भ्रष्ट मानवों द्वारा उत्पन्न समस्याओं के समाधान प्रस्तुत करता है।

मुख्य रेखांकित शब्द : पाशविक, कर्तव्य- चेतना, शुभ संकल्प, अनुभव, सापेक्ष, व्यवहारिक , बुद्धि , विषयभोग।

भूमिका

व्यक्ति का कर्तव्य सिर्फ मानव समाज तक ही सीमित नहीं होता, अपितु यह सम्पूर्ण चेतना सृष्टि के अन्दर फैला होता है। समाज की उन्नति हेतु सम्पूर्ण मानव समाज का दायित्त्व है कि, उनके द्वारा अपने कर्तव्यों का निर्वाहन कर्तव्य भाव से किया जाये। समाज में हर व्यक्ति का अपना- अपना कर्तव्य है, इन

कर्तव्यों के निर्धारण से ही समाज में सुरक्षा, शांति, व्यवस्था, प्रगति ं संभव हो पाती है अतः नीतिशास्त्र के प्रमुख उद्देश्यों में 'कर्तव्य' का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि न्याय एवं कर्त्तव्य समाजा के कल्याण संरक्षण, प्रगति के मूल आधार होते है।

श्रीमद्भागवद्गीता जो महाभारत के भीष्म पर्व का अंग है। यह १८ अध्याय ७०० श्लाकों वाला अद्भुत ग्रंथ है, विश्व साहित्य में इसके तुल्य कोई ग्रंथ मिल पाना असंभव है। इसकी प्रशंसा पूर्व एंव पश्चिमी के विद्वानों द्वारा मुक्त कंठो से की गई है। नीतिशास्त्र गीता का प्रथम विषय रहा है। यह कर्तव्य ज्ञान का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ है। गीता का मुख्य उपदेश कर्मयोग रहा है जो मनुष्य को निष्काम कर्म करने का निर्देश देता है। गीता में मनुष्य को कर्तव्य करके के लिए प्रेरित किया गया है परन्तु कर्म निष्काम भाव से होना चाहिए। यह सत्य प्राप्ति हेतु ज्ञान एवं विश्वास के साथ कर्म करने के लिए निर्देश दिये गये है। यहाँ निष्काम कर्म ;क्पेपदजतमेजमक ।बजपवद ब्द्ध को मानव जीवन का आर्दश बनाने की शिक्षा प्रदान की गई है। गीता के द्वितीय अध्याय के सैंतालीसवें श्लोक में कहा गया है।

''कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफल हेतु भूर्मा ते संड़गोस्त्वकर्मणि।। ''

अर्थात् कर्म में ही तुम्हारा अधिकार है उसके फल में नहीं, तुम कर्म फल का हेतु ना बनों, अकर्मण्यता में भी तुम्हारी आसक्ति न हो।

इस प्रकार गीता का मुख्य विषय निष्काम कर्म योग है जो कर्मयोग के नाम से भी जाना जाता है। निष्काम- कर्म का अभिप्रायः है बिना फल की अभिलाषा के कर्म करना अर्थात आसक्ति रहित होकर कर्म का पालन करना चाहे उसे कर्म में सफलता मिले या असफलता। गीता के (२/४८) श्लोक में पुनः कहा गया है,

''योगःकर्मसु कौषम्''

अर्थात समतत्व बुद्धि रूप योश ही कर्मो में चतुरता , कर्म बंधन से मुक्त होने का उपाय है। अतः यह अर्जुन के माध्यम से सम्पूर्ण संसार को समत्व बुद्धि योग के लिए चेष्टा करने हेतु प्रेरित किया गया है। यहाँ स्पष्ट शब्दों में कहा गया है 'हे अर्जुन जो पुरूष मन से इन्द्रियाँ को वश में करके अनासक्त हुआ कर्मेन्द्रियों से कर्म योग का आचरण करता है वह श्रेष्ठ है। निष्काम कर्म की महत्ता को बताने हेतु गीता के (५/६) श्लोक में कहा गया है-

''योग युक्त ब्रह्म नचिरेण अधि गच्छति''

अर्थात निष्काम कर्म योगी पर ब्रह्म परमात्मा को शीघ्र प्राप्त हो जाता है।

इस प्रकार गीता में 'निष्काम कर्म' द्वारा मनुष्यों को स्वार्थ परक कामना से रहित हो कर, इन्द्रियों को नियंत्रित कर 'लोक -संग्रह' हेतु कार्य करने के उपदेश दिये गये है जिसके लिए 'स्थितप्रज्ञ' अर्थात् दृढ़ संकल्प क्योंकि कार्य चंचल मन से संभव नहीं अर्थात स्थित बुद्ध होने की आवश्यकता होती है। जो आज के युग में मानवीय समाज हेतु अत्यंत आवश्यक है।

पाश्चात्य जर्मन दार्शनिक इमानुएल कांट का नैतिक चिंतन के इतिहास में अपनी एक विशिष्ट पहचान है। इनके विचार अद्वितीय है। इनके द्वारा बड़ी स्पष्टता के साथ मानवीय वैदिक चेतना में व्याप्त निरपेक्ष आदेश की व्याख्या प्रस्तुत की गई है। कांट के दर्शन में नीति के विषयों को ही प्राथमिकता दी गई है। गीता के सदृश कांट के दर्शन में भी धर्म या धार्मिकता के अध्यात्मिक आधार उनकी नैतिक दृष्टि की मान्यताओं के रूप में प्रस्तुत की गई है।

कांट के द्वारा अपनी पुस्तक 'ग्राउण्ड वर्क ऑफ द मेटाफिजिक्स ऑफ मोरल में कर्तव्य सिद्धांत का निरूपण किया गया है। ये कहते है कि कोई भी कार्य तब तक शुभ कहा माना जा सकता जब तक उसके मूल में 'शुभ-संकल्प' न छिपा हो।

जीम उवतंस सूं के पृष्ठ संख्या- ६१ में कहा है-

'प्ज पे पउचवेपइसम जव बवदबमपअम ंदल जीपदह ंज ंसस पद जीम ूवतसक वत मअमद वनज वि पज ए ूीपबी बंद इम जंामद ें हववक ूपजीवनज ुनंसपपिबंजपवद मगबमचज ं ष्हववक ूपससण'

कांट कहते है कि सिर्फ कर्तव्य चेतना द्वारा प्रेरित संकल्प ही नैतिक एवं शुभ संकल्प होते है। यहाँ नैतिकता का एक मात्र आधार कर्तव्य पालन की चेतना को माना गया है। इसलिए कांट ''कर्तव्य, कर्तव्य के लिए'' ;क्नजल वित कनजपमेंामद्ध का निर्देश देते है।

उल्लेखनीय है कि कांट के नैतिक सिद्धांत को कर्तव्य, कर्तव्य के लिए ' कठोरतावाद, सन्यासवाद, बुद्धिवाद, नैतिक विशुद्धतावाद आदि नामों से जाना जाता है। कांट कहते है कि किसी भी सिद्धांत का नैतिक मूल्य उसके परिणामों में नहीं बल्कि उस कर्म के मूल में छिपा हुआ मनुष्य के विशुद्ध कर्तव्य चेतना द्वारा निर्धारित होता है। कर्तव्य - चेतना ही सम्पूर्ण नैतिकता का नींव माना जाता है।

कांट के नैतिक दर्शन में तीन बातें स्पष्टतः देखी जा सकती है-

- उचित, अनुचित का मानक, का ज्ञान व्यावहारिक बुद्धि की देन होती है।
- नैतिक नियमों का बोध सहज होता है, मानव बुद्धि सहज रूप से सभी नैतिक नियमों को जानती है परन्तु किसी कार्य का उचित अनुचित होना अनुमानजन्य होता है न की सहज ।

- सभी प्रकार के नैतिक नियम अनुभव सापेक्ष होते है।

कांट भी गीता के 'निष्काम कमयोग' के भांति ही कहते है कि '' व्यक्ति को इसलिए कोई कार्य नहीं करने चाहिए कि उस कम से उसे सुख मिलेगा, अपितु उसे कर्म को अपना कर्तव्य ;क्नजलद्ध समझकर करना चाहिए। कर्तव्य करते समय सिर्फ कर्तव्य पालन हेतु तत्पर रहना चाहिए एवं फल की आकांक्षाा को पूर्णतः त्याग देना चाहिए। कर्तव्य को हमेशा शुभ संकल्प के साथ करना चाहिए न कि किसी बाह्य उद्देश्य की पूर्ति हेतु करना चाहिए।

सर्वविदित है कि मानव में बुद्धि के अतिरिक्त वासना, भावना, राग द्वेष इत्यादि निम्न प्रवृत्तियों भी वर्तमान है क्योंकि वह दो तत्वों को अद्भुत संयोग होता है- विवेक, एवं भावनाएँ ही ये दो तत्व है।

उल्लेखनीय है कि कांट के द्वारा भावनाओं की अपेक्षा बुद्धि (विवेक) पर अत्यधिक बल दिया गया है। ये कहते है नैतिकता का आधार विवेक (बुद्धि) ही है। इसके द्वारा हीं तो उचित, अनुचित का ज्ञान हो पाता है जहाँ भावनाएँ व्यक्ति का कर्तव्य पथ से नीचे ले जाती है वहीं बुद्धि कर्तव्य का मार्ग दिखलाती है। इसलिए भावनाओं पर कभी नैतिकता को आधारित नहीं करना चाहिए क्योंकि ये हमारे तर्को में दोष उत्पन्न करती है अतः व्यक्ति को हमेशा भावनाओं को दबा कर रखना चाहिए। ध्यातव्य है कि कांट के द्वारा मानवीय जीवन में आनंद की अवहेलना नहीं की गई है क्योंकि वे करते है 'पूर्ण शुभ' में शुभ संकल्प के साथ आनंद भी सम्मिलित होता है। ये कर्तव्य पालन में आनंद के महत्व को स्वीकार करते है परन्तु ये आनंद को तब तक हीं महत्वपूर्ण स्वीकार करते है जबतक यह आनंद हमारे कर्तव्य पालन में बाधक सिद्ध न हो। वे कहते है जैसे ही कर्तव्य पालन के ये बाधक बने वैसे हीं इस इच्छा का परित्याग कर देना चाहिए। कर्तव्य पालन का अभिप्राय हीं है आत्म बलिदान यहाँ आत्मा से आशय है व्यक्ति के पाशविक पक्ष का जिसका संबंध कामनाओं, भावनाओं, संवेगो से रहता है। कांट द्वारा इन पाशविक पक्ष को तुच्छ मानते हुए त्याज्य कहा गया है। नैतिकता के क्षेत्र में आगे बढ़ने हेतु इन पाशविक पक्ष के दमन की बात कही गई है क्योंकि इसके दमन के बिना उन्नति संभव नहीं है। इसी कारण तो कांट का मत नैतिक शुद्धतावाद या कठोरतावाद के नाम से प्रसिद्ध है।

यहाँ उल्लेखनीय है कि इस बिन्दु पर आ कर गीता के 'निष्काम कर्म' एवं कांट के 'कर्तव्य, कर्तव्य के लिए' के असमानता आ जाती है।

गीता एवं कांट के विचारो में समरूपता

- ❖ दोनों ने ही लोक कल्याण को कम का आधार माना है।
- ❖ निष्काम भाव से कर्म करने का आदेश दिया है।
- ❖ कर्म शुद्ध बुद्धि से करना चाहिए क्योंकि यह रागद्वेष द्वारा प्रभावित नहीं हो।
- ❖ राग द्वेष या विषय भोग की लिप्सा कार्य में बाधक बताये गये है।
- ❖ दोनो के विषय भोग, वासनाओं आदि को नियंत्रण रखने हेतु मन एवं बुद्धि को भी नियंत्रित करने का आदेश दिया है।

गीता कांट के विचारों में भिन्नता

- ❖ कर्मो के वास्तविक स्वरूप में भेद है- कांट के मत में वे सभी कर्म जो सत्कर्म है, अपने आप में सतकर्म ही कहे जा सकते है परिस्थितियों के अनुरूप उनका स्वरूप नहीं बदलता है। परन्तु गीता में कर्मो की आन्तरिक पवित्रता पर भी बल दिया गया है

- ❖ वैराग्य तथा इन्द्रिय संयम में भिन्नता कांट के नितिशास्त्र में वैराग्य का तत्व अधिक है परन्तु गीता में इन्द्रियों के विषयों के भोगों को नही वरन् उने प्रति आसक्ति की निंदा हुई है।

- ❖ तत्वज्ञान गीता का नीतिशास्त्र तत्वज्ञान या अध्यात्म पर आधारित है परन्तु कांट के नीति शास्त्र में अध्यात्म या तत्वज्ञान सिर्फ मान्यता मात्र है।

- ❖ कांट के नीतिशास्त्र का अध्यात्म विवैयकित ;प्उचमतेवददंस द्ध है जबकि गीता के नीतिशास्त्र का पृष्ठाधार ईश्वर है।
- ❖ गीता इन्द्रियों को बुद्धि के मार्ग पर नियंत्रित करने का आदेश देती है जबकि कोट इनका दमन करने का आदेश देते है।

उल्लेखनीय है कि इन दोनों के विचारों में भेद है जहाँ नीतिशास्त्र के मूल सिद्धांतो का सवाल है उसमें बहुत समानताा है परन्तु इससे ये दोनों पूर्णत समान नहीं हो जाते है।

उद्देश्य

इस लेख का उद्देश्य वर्तमान परिदृश्य चारित्रिक पतन के कारण उत्पन्न सभी समस्याओं का निराकण करने में सहयोग करना है क्योंकि कर्तव्यों की उपेक्षा कर हम विकास तथा मानवता के कल्याण की प्रगति को भी धीमा कर देते है।

लेख प्रविधि

इस लेख को प्रस्तुत करने हेतु लेख से संबंधित विषयों के मूल ग्रंथों, सहायक ग्रंथों से तथ्यों का संकलन कर उसके मर्म को समझ, गहन चिंतन- विश्लेषण के आधार पर ये लेख प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्रासंगिकता

वर्तमान परिदृश्य में जहाँ जटिलतापूर्ण जीवन में आज कर्तव्यपरायणता का भाव समाप्त सा होता जा रहा , आज नितांत अनिवार्य है सेवा - भाव त्याग, निष्काम कर्म जैसे आदर्श मानवीय जीवन हेतु प्रस्तुत की जाये। आज मानव मूल्यों की रक्षा के दायित्व को भूला बैठा है और कर्तव्यहीन जीवन जी रहा है। ऐसे में कर्तव्य- बोध समाज को पतन से बचाने में महत्वपूर्ण योगदान कर सकता है।

.निष्कर्ष

सर्वविदित है कि भौतिक साधनों पर आधारित सुख अस्थायी होती है, परन्तु आत्मिक खुशी शांति प्रदान करती है। नैतिक कर्तव्यों को किसी बाह्य दबाव की उत्पति समझना गलत है क्योंकि कर्तव्यों को आन्तरिक प्रेरणा के कारण किया जाता है। कांट का नैतिक विचार कठोरतावादी होते हुए भी यह मानव समाज के लिए ऐसी आधारशिला है जो वर्तमान भोगवादी, भ्रष्ट, मानवों द्वारा उत्पन्न किये जाने वाली अनेक मानवीय समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करता है। वही गीता से इन्द्रियों का निर्दयतापूर्वक दमन की अपेक्षा उनका उन्नयन की शिक्षा दी गई है और प्रेम , सहानुभूति, परोपकार आदि को सराहा है यह नैतिकता का रूपान्तरण धर्म में धर्म का, अध्यात्म में किया गया है। मनुष्यों द्वारा इनका अनुकरण हुए कर्तव्यों को प्रधान मान जीवन को इनके अनुरूप संगठित किया जाय, तो यह न सिर्फ मानवता के लिए अपतु सम्पूर्ण विश्व के कल्याण और विकास में सहायक होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- गिरि देव गगन १९७६, गीताः कांट, गाँधी एवं विनोबा, किशोर, विद्या निकेतन, वाराणसी।
- पाण्डेय लाल संगम१९९१ नीतिशास्त्र का सर्वेक्षण, सेन्ट्रल पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद।
- डॉ० राय,छाया १९७७ काट की नीति- दर्शन, भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली।
- डॉ०मिश्र, नारायण ह्रदय१९७६, नीतिशास्त्र की भूमिका, हरियाणा साहित्य अकादमी, चंडीगढ।
- तिलक १९७६, श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य अथवा कर्मयोगशास्त्र, जयन्त श्रीधर तिलक प्रकाशन, पूना।
- राधाकृष्णन २०१२ भारतीय दर्शन का इतिहास भाग-१ राजपाल एण्ड सन्स प्रकाशन।
- सक्सेना, लक्ष्मी१९९२, नीति विज्ञान के मूल सिद्धांत, उतर प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, लखनऊ

- ब्रौक, सी०डी० प्रथम संस्करण, नीतिशास्त्रीय सिद्धांत के पाँच प्रचार, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना।
- कांट १९७८ - नैतिक नियम, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।